॥ श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥

॥ श्रीमते रामानंदाचार्याय नमः ॥

भगवद् श्री रामानंदाचार्येणोक्तं भगवद्गीता चरम श्लोक व्याख्यानं

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहंत्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

(अध्याय १८, श्लोक ६६)

एवं सततस्मरणादिलक्षणपरभक्त्या निश्रेयसंसिद्धिमभिधाय शरणव्रजनरूपशरणागतिरेव सर्वान् विरोधिभावान्निरस्य **परमपुरुषा**नुभवलक्षणविलक्षणमोक्ष सम्पादिकेति स्वकीयसिद्धान्तं द्दढयति सर्वधर्मानिति । सर्वधर्मनित्यत्र धर्मशब्देन '**धर्मेण पापमपनुदती**' तिश्रुत्यभिहिता भगवतोऽत्यर्थ प्रियेण पुरुषेण सम्पादनीयाया भक्तेः प्रतिबन्धकानामनन्तकालसञ्चितानाम कृत्य करणकृत्या करणात्मकानां पापानां प्रायश्चित्तात्मकाः कृच्छ्रचान्द्रायणादयो धर्माः समुदीरिताः । ते हि सर्वेत्युक्त्या विविधा बहुवचनेनानंताश्च बोध्याः । तथा चानन्तजन्मार्जितानां भगवद्भक्तिप्रतिबन्धकानां पापानां प्रायश्चित्तरूपेण विहितान विलम्बितफलाननन्तकालसम्पादनीयानत एव दुष्करान् विविधाननन्तांश्च कृच्छ्रचान्द्रायणादीन् सर्वधर्मान् परित्यज्य स्वरूपतस्त्यक्त्वैकं मां सर्वज्ञं

सर्वथा समर्थवात्सल्यादिकल्याणगुणाकरमनन्तकरुणावरुणालयं सर्वेश्वरं च मामेव शरणमुपायं व्रज । सर्वविधसामर्थ्यहीनं दीनं मामवश्यं रक्षिष्यति सर्वविधसमर्थोऽनंतवात्सल्यादि गुणैकमहार्णवो भगवान् श्रीराम इति महाविश्वासशाल्यध्यवसायात्मकं मत्प्रपदनं विधेहीत्यर्थः अहं सर्वविधसामर्थ्यशाली सर्वज्ञः 'सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम' । इत्युक्तप्रकारेण स्वाश्रित रक्षणे दीक्षितश्चाहं सर्वेश्वरस्त्वा मां समाश्रितं त्वां सर्वपापेभ्यो मत्प्राप्तिविरोधिभ्यः पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः शोकं मा कार्षीः । इहोपायबुद्ध्याऽनुष्ठानमेव सर्वधर्माणां वर्जितमिति भगवदाज्ञाकैंकर्यरूपतया कर्मणां भगवद्गुणानुभवरूपतया भक्तेश्च प्रपन्नैरनुष्ठानं न दोषावहम्। भगवदर्चनादौ प्रपन्नस्य प्रवृत्तिस्तु नोपायधिया किन्तु रागादेवेति ध्येयम् । **सर्वज्ञस्य सर्वक्तेर्वात्सल्य जलधेर्भगवतः श्रीरामस्य स्वभाव एवैष यत् स प्रार्थित एव सर्वं करोतीत्युपायत्वप्रार्थनाऽवश्यकर्त्तव्येत्यविध्येयम्** । सेयमुपायत्वप्रार्थनैव प्रपत्तिः । प्रारब्धातिरिक्तकर्म निवर्त्तको ऽसकृदाप्रयाणादनुष्ठेयश्च भक्तियोगः '**अन्तकाले च मामेव स्मरन मुक्त्वा कलेवरम् । यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥**' इत्यादिभगवद् वचनप्रामाण्यादन्तिमस्मृतिमपेक्षते, '**सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते । अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥' इति भगवच्छ्रीरामवचनप्रामाण्यात् सकृदेवातुष्ठेयः 'साध्यभक्तिस्तु सा हन्त्री प्रारब्धस्यापि भूयसी' इतिवचनप्रामाण्यात् प्रारब्धस्यापि विनाशकश्च प्रपत्तियोगः । 'स्थिरे मनसि सुस्वस्थे शरीरे सति यो नरः । धातुसाम्ये स्थिरे स्मर्त्ता विश्वरूपं च मामजम् ॥ ततस्तं म्रियमाणं तु काष्ठपाषाणसन्निभम् । अहं स्मरामि मद्भक्तं नयामि**

परमांगतिम् ॥ इतिभगवदुक्तेः प्रमाणतयाऽन्तिमस्मृतिं नापेक्षते । इत्युभयोर्भक्तियोगप्रपत्तियोगोर्विशेषः ।

प्रार्थनांशेन शरणागतिपदवाच्य आत्मनिक्षेपांशेन न्यासपदवाच्यश्च प्रपत्तियोग एव । **"आनुकूल्यस्य सङ्कल्पः प्रातिकूल्यस्य वर्जनं रक्षिष्यतीति विश्वासो गोप्तृत्ववरणं कार्पण्यंचेतीमानि प्रपत्तियोगस्य पञ्चाङ्गानि। तथा हि शास्त्रं 'आनुकूल्यस्य संकल्पः प्रातिकूल्यस्य वर्जनम् । रक्षिष्यतीति विश्वासोगोप्तृत्ववरणं तथा । आत्मनिक्षेपकार्पण्ये षड्विधा शरणागतिः ॥"**

(अहिर्बुध्नि संहिता ३७/२८ इति।) **पञ्चापीमानि प्रपत्त्यंगानि बोधायनवृत्तिकृता 'भगवता श्रीपुरुषोत्तमाचार्यबोधायनेन श्रीपुरुषोतमप्रपत्तिष्टके' विहितानि । तथा हि 'राम! दीनोऽनुकूलोऽहं विश्वस्तोऽप्रातिकूल्यवान् । त्वयि न्यस्यामि चात्मानं पाहि मां पुरुषोत्तम?॥२॥ इति** । **"न जातिभेदं न कुलं न लिङ्गं न गुणक्रियाः । न देशकालौ नावस्थां योगो ह्ययमपेक्षते ।"** (भरद्वाजसंहिता १/१४) इति शास्त्रप्रामाण्यादस्मिन् प्रपत्तियोगे सर्वेषामाधिकारः ॥६६॥

अर्थ :- एवं पूर्वकथित प्रकार से सतत (हरहमेशा) भगवान् का जो स्मरणादिलक्षण पराभक्ति है तादृश पराभक्ति के द्वारा आत्यन्तिक दुःखत्रय निवृत्ति निरतिशयानन्दावाप्तिलक्षण मोक्ष की सिद्धि होती है इस बात को कह करके शरणव्रजन लक्षण जो शरणागति है तादृश शरणागति ही सभी प्रकार के मोक्ष विरोधीभाव का निराकरण करके **परमपुरुष परमात्मा** का जो साक्षादनुभवलक्षण विलक्षण मोक्ष है उस का संपादक है यह जो स्वकीय सिद्धान्त है तादृश सिद्धान्त को दृढ करने के लिये कहते हैं **'सर्वधर्मानित्यादि'** । श्लोकस्थ सर्वधर्मान् में धर्मशब्द से **'धर्मेण पापमपनुदति'** धर्म से पाप का निराकरण किया जाता है अर्थात् धर्म पाप का विनाशक है इस श्रुति

में कथित भगवान् का अति प्रिय व्यक्ति से संपादन करने के योग्य जो भक्ति है तादृश भक्ति का प्रतिबंधक अनेक जन्मान्तर से (अनादि काल से) संचित अकृत्य करण तथा कृत्य का अकरण लक्षण जो पाप समुदाय है तादृश पाप समुदाय का विनाशक जो प्रायश्चित्त स्वरूप **चान्द्रायण कृच्छचान्द्रायणादि लक्षण धर्म** विशेष तादृश धर्म विशेष का ग्रहण होता है । (अर्थात् श्लोकस्थ सर्व धर्म का अर्थ है पापविरोधी चान्द्रायणादिक धर्म विशेष) वह धर्म सर्वपद के उपादान होने से अनेक हैं तथा बहुवचन के उपादान होने से अनन्त हैं। तब ऐसा अर्थ होता है अनन्त जन्मान्तर से (अनेक भव परम्परा से) समुपार्जित भगवान् में होने वाली भक्ति का प्रतिबन्धक जो पाप तादृश पाप के अपनोदन के लिये प्रायश्चित्तरूप से विहित तथा विलंबित फलक एवम् अनन्तकाल में संपादन करने के योग्य अत एव अत्यन्त दुष्कर (करने के अयोग्य) अनेक प्रकार के अनन्त संख्या वाला कृच्छचान्द्रायणादिक सभी धर्म को छोड़ करके (परित्याग करके) अर्थात् **स्वरूपतः इन सभी धर्मो का परित्याग करके केवल एक मुझ सर्वज्ञ सर्वथा समर्थ वात्सल्यादिकल्याण गुणाकर समुद्र सदृश अनन्त करुणा दया के वरुणालय सर्वेश्वर परमात्मा श्रीराम के ही चरण में जाओ अर्थात् उपायरूप से मेरा अनुव्रजन करो।** सभी प्रकार के सामर्थ्य से रहित अतिदीन मेरा अवश्यमेव रक्षण पालन करेंगे क्योंकि भगवान् सर्व प्रकार से समर्थ हैं **अनन्त वात्सल्यादि गुण गण के आलय हैं साकेताधिपतिभगवान् श्रीराम शरणागतवत्सल हैं अतः मेरी रक्षा अवश्यमेव करेंगे इस प्रकार से महाविश्वास युक्त अध्यवसाय लक्षण मेरा प्रपदन करो। मैं सर्व प्रकारक सामर्थ्य युक्त सर्वज्ञ हूं अतः एक बार भी मेरी प्रपत्ति करनेवाला मैं आप का हूं मेरी रक्षा करें ऐसी जो याचना करता है एतादृश प्रपन्न तथा याचक सभी प्राणियों को मैं अभय कर देता हूं यह मेरा व्रत है"** इस प्रकार स्वाश्रित भक्त पुरुष के रक्षण करने में

दीक्षित मैं सर्वेश्वर मेरी शरण में आगत तुम को सभी प्रकार के पाप से अर्थात् मेरी प्राप्ति होने में विरोधी जो पाप समुदाय हैं उन पाप समुदाय से तुम्हें मुक्त कर दूंगा तुम शोक मत करो अर्थात् किसी भी प्रकार की चिन्ता मत करो । यहाँ उपाय बुद्धि से धर्मानुष्ठान का ही नाम है सर्व धर्म परित्याग अतः भगवान् की आज्ञा तथा कैंकर्यरूप से कर्म का तथा भगवान् के गुण का जो अनुभव तद्रूप से भक्ति का जो अनुष्ठान वह प्रपन्न भक्तों के लिये दोषाधायक नहीं है । और भगवान की आर्चापूजा में जो प्रपन्न व्यक्ति की प्रवृत्ति होती है वह उपाय रूप से नहीं किन्तु भगवान् में रागमूलक है। **सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान् वात्सल्य के जलधि स्वरूप भगवान् श्रीरामचन्द्रजी का एतादृश स्वभाव ही है जो प्रार्थना करने पर ही सभी अभिलाषित वस्तु को संपन्न कर देते हैं।** अतः उस तत्व की प्रार्थना अवश्य कर्तव्य है ऐसा समझना । **सर्वेश्वर श्रीराम से उपायता की जो प्रार्थना है उसी का नाम है प्रपत्ति** । प्रारब्ध कर्म से अतिरिक्त जो शुभाशुभ संचित तथा क्रियमाण कर्म हैं तादृश कर्म का निवर्तक यह भक्ति योग बारंबार अहर्निश मरण पर्यन्त अनुष्ठान करने के योग्य है। अर्थात् भक्तियोग का अनुष्ठान प्रायेण मरणपर्यन्त अहर्निश अवश्य करना चाहिये। क्योंकि **"अन्तकाले चेत्यादि"** अन्तकाल मरणकाल में मुझ परमेश्वर का स्मरण करता हुआ कलेवर (शरीर) को छोड़ कर के जो पुरुष जाता है वह मुझ परमेश्वर के भाव को अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है इसमें कोई संदेह नहीं है" इत्यादि भगवान् के वचन के प्रामाण्य से अंतिमकालिक स्मरण अवश्य अपेक्षित है। **"एकबार भी जो प्रपन्नजन मैं आप परमानन्द स्वरूप का दास हूं इस प्रकार से याचना करनेवाला है एतादृश प्रपन्न उन प्राणियों को में परमेश्वर अभय कर देता हूं यह मेरा व्रत है अर्थात् मेरी प्रतिज्ञा है"** इत्यादि **भगवान् श्रीरामचन्द्रजी** के वचन प्रामाण्य से सकृदेव एक बार ही प्रपत्तियोग अनुष्ठेय है। और **'सत्यभक्ति वह है जो कि प्रारब्ध कर्म**

का भी विनाश करनेवाली होती है' इत्यादि वचन प्रामाण्य से प्रपत्तियोग प्रारब्ध कर्म का भी विनाशक होता है । **'जहाँ तक मन स्वस्थ है शरीर स्वस्थ है बात कफादि समभाव से चल रहा है इस स्वस्थ अवस्था में अज विश्वरूप मुझ परमेश्वर का जो स्मरण करनेवाला है मरणासन्न काष्ठ लोष्ठ के समान जडात्मक स्मर्ता अपने भक्त को मैं परम गति को प्राप्त कराता हूँ"** इस भगवद्वचन की प्रामाणिकता से प्रपत्तियोग में अन्तिमकालिक स्मरण भी अपेक्षित नहीं है भक्ति योग तथा प्रपत्तियोग में यही विशेषता है एक में तो अन्तिम स्मृति अपेक्षित है और द्वितीय में अंतिम स्मृति की भी आवश्यकता नहीं है ।

प्रार्थना अंश से गृहीत शरणागति पद वाच्य प्रपत्तियोग है तथा आत्मनिक्षेपांश से न्यास पद वाच्य भी प्रपत्तियोग ही होता है। अनुकूलता का संकल्प प्रतिकूलता का निराकरण भगवान सर्वावस्था में सर्वत्र मेरी रक्षा करेंगे एताद्दश विश्वास तथा गोप्तृत्व वरण और कार्पण्य ये पांच प्रपत्ति योग के अंग हैं। शास्त्र में भी ऐसा ही कहा है **"आनुकूल्यस्य संकल्प इत्यादि"** आनुकूल्य का संकल्प प्रातिकूल्य का वर्जन (परित्याग) **भगवान् मेरी रक्षा करेंगे ऐसा विश्वास तथा गोप्तृत्व वरण आत्म निक्षेप और कार्पण्य ये छ प्रकार की शरणागति होती है (अहिर्बुध्नि संहिता ३७|२८ इति)** । **इन पांचों प्रकार की प्रपत्ति के अंगों का वर्णन बोधायन वृत्तिकार भगवान् श्रीपुरुषोत्तमाचार्य जी बोधायन ने पुरुषोत्तम प्रतिष्टक नामक ग्रन्थ में किया है। तथाहि "हे राम हे दयानिधे ? में अतिदीन व्यक्ति आप के अनुकूल हूं आप में मेरा पूरा विश्वास है कि आप अवश्य मेरा रक्षण करेंगे मैं कभी भी आपके प्रतिकूल नहीं हूँ आप में अपनी आत्मा को समर्पण करता हूं' हे पुरुषोत्तम करुणा सागर ! मेरी रक्षा करें ॥इति॥** अनुपम अतिसरल इस प्रपत्तियोग

में आपामरसाधारण सभी को अधिकार है ऐसा **भारद्वाज संहिता** में कहा है **"यह प्रपत्तियोग जाति विशेष सापेक्ष नहीं है अर्थात् जिस प्रकार से राजसूय याग क्षत्रियत्वापेक्ष है यदि ब्राह्मण करे तो फलभागी नहीं होता है यथा वा वैश्य स्तोमयाग वैश्य जाति सापेक्ष है यथा वा प्रतिग्रह याजन अध्यापन ब्राह्मणत्वापेक्ष है उसी तरह यह प्रपत्ति योग अमुक जाति के लिए ही है ऐसा नहीं अत एव द्विजाति भिन्न अनेक व्यक्ति प्रपत्ति के आश्रय ले करके कृत कृत्य हो गये हैं ऐसा इतिहास पुराण तथा लोक किंवदन्ती प्रसिद्धि है। इसी प्रकार से कुलापेक्ष भी नहीं है ना ब्रह्मचर्यादि लिंगापेक्ष है ना गुणापेक्ष है ना क्रिया सापेक्ष है ना देश कालापेक्ष है ना अवस्थापेक्ष है** । अत: सर्वजन सुलभ होने से इस प्रपत्तियोग का आश्रयण कर जीवन को कृत कृत्य बनाना चाहिये ॥६६॥